अप्रैल 2017 मूल्य 15 रुपये

रूपरेखा

सदाचार ~ सद्विचार ~ सत्संस्कार

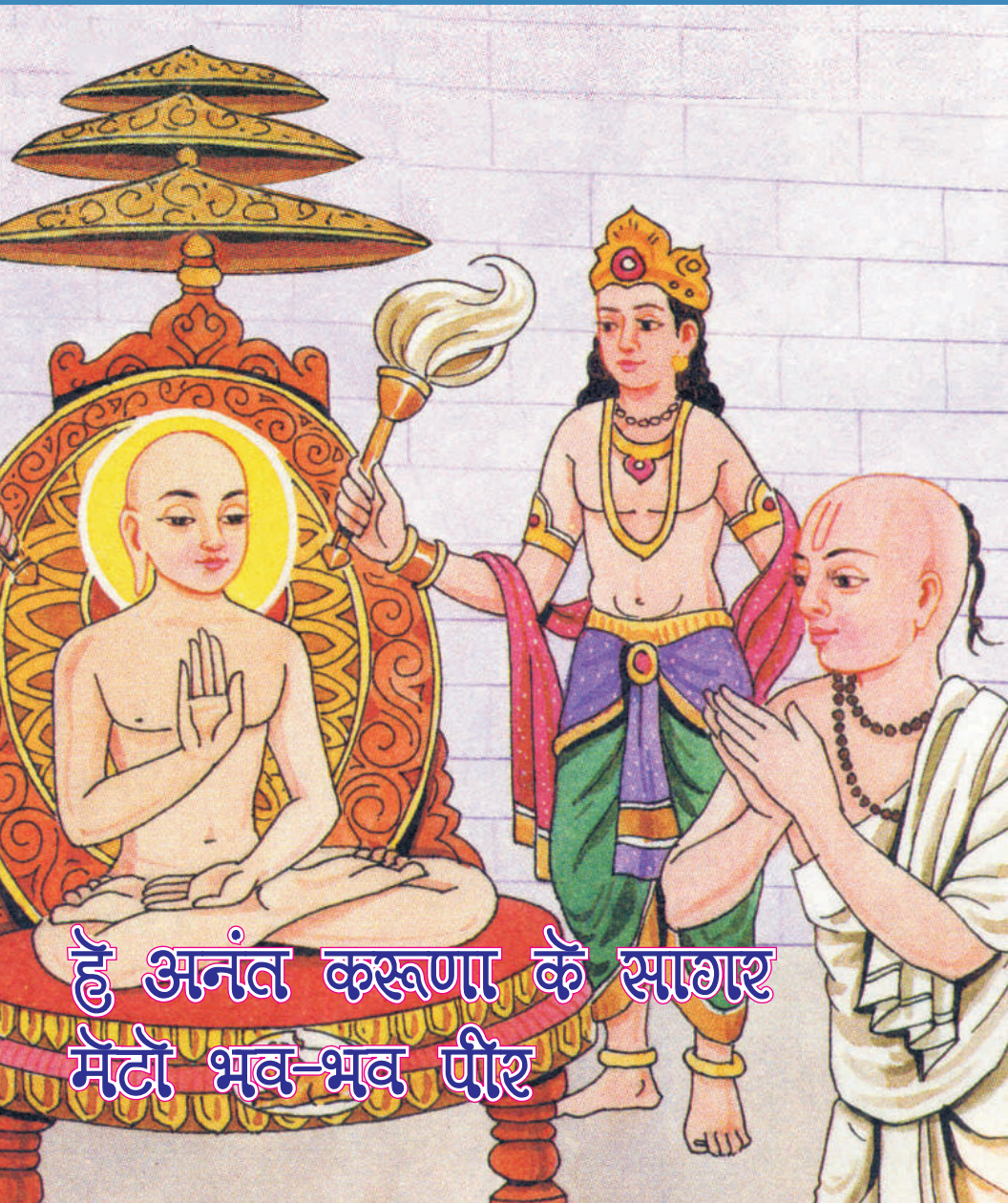

हे अनंत करूणा के सागर
मेटो भव-भव पीर

रूपरेखा

सदाचार ~ सद्विचार ~ सत्संस्कार

मार्गदर्शन :
पूज्या प्रवर्तिनी साध्वी मंजुलाश्री जी

संयोजना :
साध्वी कनकलता
साध्वी वसुमती

परामर्शक :
श्रीमती मंजुबाई जैन

प्रबंध संपादक :
अरुण कुमार पाण्डेय

सम्पादक :
श्रीमती निर्मला पुगलिया

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये
आजीवन शुल्क : 3000 रुपये

प्रकाशक
अरूण तिवारी
मानव मंदिर मिशन ट्रस्ट (रजि.)
पोस्ट बॉक्स नं. : 3240
सराय काले खाँ बस टर्मिनल के सामने,
नई दिल्ली - 110013
फोन नं. : 26345550, 26821348
Website : www.rooprekha.com
E-mail : contact@manavmandir.info

इस अंक में

जैन परंपरा पैदा क्यों नहीं कर पाई किसी गांधी को?
हजारों वर्षों की अपनी अहिंसा परंपरा में यह समाज कोई महात्मा गांधी पैदा क्यों नहीं कर पाया? हिंसा के खिलाफ वह कोई सकारात्मक शक्ति प्रकट क्यों नहीं कर पाया? अहिंसा को जीवन और जगत की समस्याओं के हल के रूप में प्रस्तुत क्यों नहीं कर सका? उसमें से एक अपराजेय पराक्रम की उद्भावना क्यों नहीं कर सका? और जिस अकेले गांधी ने अपने छोटे से जीवन में अहिंसा की तेजस्विता को विश्व-मंच पर प्रतिष्ठित कर दिया, अपने हजारों वर्षों की सुपुष्ट परंपरा में भी जैन समाज
04

साधु-चर्या
साधना के लिए योगाभ्यास भी आवश्यक है। प्राणायाम, जाप, ध्यान, स्वाध्याय आदि दैनिक क्रियाओं के अतिरिक्त जो समय रहता है उसमें अपनी साधना के साथ जन-जीवन का कल्याण करना भी मुनि का कर्तव्य होता है।
इसी स्व-पर कल्याण की प्रेरणा से प्रेरित मुनि-जन लोगों में प्रवचान करते आध्यात्मिक प्रयोग सिखाते हैं।
12

तालबद्ध शब्द
श्रीं बीज मन्त्र जप करने से ऐश्वर्य की प्राप्ति और सौन्दर्य की सुरक्षा होती है। इस बीज जाप से वचन सिद्धि होती है। 'ओमू ह्रीं अर्हम् नमः के जाप से सुख, शान्ति और मनोकामना पूरी होती है। चारों दिशाओं में यदि साधक शान्ति व्याप्त करना चाहता है तो प्रातः उठते ही, आंख खोलने से पहले ही चारों दिशाओं में क्रमशः मुंह करके तीन-तीन बार 'ओम् शान्ति' मन्त्र का उच्चारण करे। इससे सब तरफ शान्ति का वातावरण व्याप्त हो जाता है।
19

भारतीय संस्कृति के वैज्ञानिक आधार
घर के बड़े हमेशा घर के किसी भी सदस्य को दक्षिण की ओर पैर कर सोने पर मना करते हैं, क्योंकि इससे बीमार होने की आशंका होती है। कारण वैज्ञानिक है। रक्त में लोहे के कण काफी मात्रा में होते हैं जो पृथ्वी से उत्तर-दक्षिण दिशा में रहने से एक चुम्बक की तरह काम करने लगते हैं। दक्षिण की ओर पैर करने पर यह खून में मिले चुम्बकीय कण, पैर से मस्तिष्क की ओर बहने लगते हैं, जिसके कारण मस्तिष्क पर खून का दबाव बढ़ जाता है।
24

संत-वाणी

देह छतां जेनी दशा वर्ते देहातीत,
ते ज्ञानी नां चरण मां हो वंदन अगणित।

-श्रीमद् राजचन्द्र

बोध-कथा

सत्संग का असर

एक शिष्य अपने गुरुजी के पास आकर बोला- 'गुरुजी हमेशा लोग प्रश्न करते है कि सत्संग का असर क्यों नहीं होता? मेरे मन में भी यह प्रश्न चक्कर लगा रहा है। कृपा करके मुझे इसका उत्तर समझाएं' गुरुजी ने उसके सवाल पर कोई प्रतिक्रिया नहीं जताई। लेकिन थोड़ी देर बाद बोले- 'वत्स जाओ, एक घड़ा मदिरा ले आओ।' शिष्य मदिरा का नाम सुनते ही अवाक रह गया। 'गुरुजी और शराब' वह सोचता रह गया। गुरुजी ने फिर कहा- 'सोचते क्या हो?जाओ एक घड़ा मदिरा ले आओ।' वह गया और मदिरा का घड़ा ले आया। फिर गुरुजी ने शिष्य से कहा, 'यह सारी मदिरा पी लो।' शिष्य यह बात सुनकर अचंभित हुआ। आगाह करते हुए गुरु जी ने फिर कहा- 'वत्स, एक बात का ध्यान ररखना, मदिरा मुंह में लेना पर निगलना मत। इसे शीघ्र ही थूक देना। मदिरा को गले के नीचे न उतारना।' शिष्य ने वही किया, मदिरा को मुंह में भरकर तत्काल थूक देता, देखते-देखते घड़ा खाली हो गया। फिर आकर उसने गुरुजी से कहा- 'गुरुदेव, घड़ा खाली हो गया।, गुरुजी ने पूछा- 'तुझे नशा आया या नहीं?' शिष्य बोला, 'गुरुदेव, नशा तो बिल्कुल नहीं आया।' गुरुजी बोले- 'अरे मदिरा का पूरा घड़ा खाली कर गए और नशा नहीं चढ़ा? यह कैसे संभव है?' शिष्य ने कहा, 'गुरुदेव, नशा तो तब आता जब मदिरा गले से नीचे उतरती, गले के नीचे तो एक बूंद भी नहीं गई फिर नशा कैसे चढ़ता?' गुरुजी ने समझाया, 'सत्संग को ऊपर-ऊपर से जान लेते हो, सुन लेते हो गले के नीचे तो उतारते ही नहीं, व्यवहार में यह आता नहीं तो प्रभाव कैसे पड़ेगा? सत्संग के वचन को केवल कानों से नहीं, मन की गहराई से भी सुनना होता है। एक-एक वचन को हृदय में उतारना पड़ता है। उस पर आचरण करना ही सत्संग के वचनों का सम्मान है।

बाहर वही है जो भीतर है

धर्म की कोई शिक्षा नहीं हो सकती। शिक्षा बाहर की होती है, भीतर का नहीं होती। भीतर की साधना होती है, बाहर की शिक्षा होती है। शिक्षा से स्मृति प्रबल होती है, साधना से ज्ञान के द्वार खुलते हैं। इसको इस तरह समझें, कि बाहर के सम्बन्ध में हम जो जानते हैं, वह 'लिन्क' बात है। जो कल पता नहीं थी, और अगर हम खोजते न, तो कभी नहीं पता चलती। भीतर के सम्बन्ध में जो हम जानते हैं, वह सिर्फ दबी थी, लापता थी गहरे में। खोज लेने पर जब हम उसे पाते हैं, जो वह कोई नई चीज नहीं होती।

बुद्ध से पूछें, महावीर से पूछें- वे कहेंगे, 'जो हमने पाया, वह मिला ही हुआ था, सिर्फ हमारा ध्यान उस पर नहीं था।'

आपके घर में हीरा पड़ा हो, रोशनी न हो, तो हीरा नहीं दिखाई पड़ेगा। फिर दिया जले, रोशनी हो जाये, हीरा मिल जाये, तब आप ऐसा नहीं कहेंगे कि हीरा कोई नई चीज है। वह था ही घर में सिर्फ प्रकाश नहीं था, अंधेरा था, इसलिए वह दिखाई नहीं पड़ता था।

आत्म-ज्ञान आपके पास है, सिर्फ ध्यान नही हैं उस पर आपका। लेकिन विज्ञान आपके पास नहीं है। उसे खोजना पड़ेगा। उस हीरे को खदान से खोद कर, निकाल कर घर लाना पड़ेगा। इस शर्त के कारण विज्ञान सीखा जा सकता है। जो खदान तक गये हैं, जिन्होंने हीरा खोदा है, वह कैसे लाये है? क्या है तरकीब? वह सब सीखी जा सकती है।

धर्म सीखा नहीं जा सकता, धर्म साधा जा सकता है। साधा और सीखने में बुनियादी फर्क है। सीखना सूचनाओं काा संग्रह है, साधना जीवन का रूपांतरण है, जिसमें अपने को बदलना होता है।

इसलिए कम पढ़ा-लिखा आदमी भी धार्मिक हो सकता है। लेकिन कम पढ़ा-लिखा आदमी वैज्ञानिक नहीं हो पाता। बिलकुल साधारण आदमी, जो बाहर के जगत् में कुछ भी नहीं जानता है, वह भी कबीर हो सकता है, कृष्ण हो सकता है, क्राइस्ट हो सकता है। क्राइस्ट खुद एक बढ़ई के लड़के हैं, कबीर एक जुलाहे के। कुछ बड़ी जानकारी बाहर की नहीं है। कोई पांडित्य नहीं है। कोई बड़ा संग्रह नहीं है। फिर भी अन्तःप्रज्ञा का द्वार खुल सकता है। क्योंकि जो पाने जा रहे हैं, वह भीतर ही छिपा हुआ है। थोड़ा-सा खोदने की बात है। हीरा तो पास ही है, सिर्फ मुट्ठी बन्द है, उसे खोल लेने की बात है। यह जो मुट्ठी खोलना है, यह साधना है। हीरा क्या है, कहां छिपा है, किस खदान में मिलेगा, कैसे खोजा जायेगा? इस सबकी जानकारी बाह्य सूचना है।

प्रस्तुति : निर्मला पुगलिया

जैन परंपरा पैदा क्यों नहीं कर पाई किसी गांधी को?

○ आचार्य रूपचन्द

यह एक आम धारणा है कि जैन धर्म एक अहिंसा-प्रधान धर्म है। जैन चिंतन में अहिंसा सर्वोच्च शिखर के रूप में प्रतिष्ठित है भी। जैन साधना में भी इसको सर्वोपरि महत्व दिया गया है। जैन मुनियों की आचार चर्या इसका जीता जागता प्रमाण है। जैन श्रावक समाज की आचार-संहिता में भी अहिंसा को प्रमुख स्थान प्राप्त है। जैन समाज गर्व के साथ घोषणा भी करता है कि हजारों वर्षों के इतिहास में उसने हिंसा के साथ कभी समझौता नहीं किया।

जैन परंपरा की अहिंसा-निष्ठा असंदिग्ध है। इस पर कोई भी अंगुली उठाने का साहस नहीं कर सकता। किसी ने इस पर कायरता का आरोप भले ही लगाया हो, किन्तु इस पर कभी हिंसा का आरोप नहीं लगा। अपने अस्तित्व संकट के समय भी इसने कभी हिंसा का मार्ग नहीं लिया। अपने प्राण दे दिए किन्तु किसी के प्राणों को लेने के लिए हाथ नहीं उठाया।

इस ऐतिहासिक सच को स्वीकारते हुए भी मेरे मन में एक प्रश्न निरंतर उठता रहा है कि हजारों वर्षों की अपनी अहिंसा परंपरा में यह समाज कोई महात्मा गांधी पैदा क्यों नहीं कर पाया? हिंसा के खिलाफ वह कोई सकारात्मक शक्ति प्रकट क्यों नहीं कर पाया? अहिंसा को जीवन और जगत की समस्याओं के हल के रूप में प्रस्तुत क्यों नहीं कर सका? उसमें से एक अपराजेय पराक्रम की उद्‌भावना क्यों नहीं कर सका? और जिस अकेले गांधी ने अपने छोटे से जीवन में अहिंसा की तेजस्विता को विश्व-मंच पर प्रतिष्ठित कर दिया, अपने हजारों वर्षों की सुपुष्ट परंपरा में भी जैन समाज ऐसा क्यों नहीं कर सका?

महावीर बनाम परंपरागत अहिंसा

ये सारे प्रश्न अपने संर्वांगीण उत्तर

के लिए एक ऐतिहासिक विश्लेषण और तटस्थ जांच-पड़ताल मांगते हैं। किन्तु जैन-मुनि-चर्या, जो अहिंसा का चरम उत्कर्ष मानी गई है, के अध्ययन से यह निष्कर्ष सहज ही सामने आता है कि परंपरागत जैनी अहिंसा का विकास नकारात्मक भूमिका पर हुआ है। और नकार पर खड़ी अहिंसा क्रमशः व्यक्तिपरक और व्यक्ति-केन्द्रित होती चली जाए, इसमें आश्चर्य जैसा कुछ भी नहीं। व्यक्ति परक अथवा व्यक्ति-केन्द्रित अहिंसा समाज के लिए आदरणीय हो सकती है, आचरणीय नहीं। उस स्थिति में समाज के स्तर पर न उसकी सकारात्मक भूमिका रह पाती है और न उसमें से किसी ऐसे वीर्य और पराक्रम की संभावना, जो अपना व्यापक प्रभाव समूह-जीवन पर छोड़ सके।

परंपरागत जैनी अहिंसा का विकास नकारात्मक भूमिका पर क्यों हुआ, क्यों वह समूह के दायित्व से विमुख रही, यह भी अपने में बहुत बड़ा प्रश्न है। इस परंपरा के आदि प्रवर्तक हैं भगवान ऋषभदेव और अंतिम तीर्थकर हैं भगवान महावीर। इसको विरासत में जो भी मिला है, वह इन्हीं महापुरुषों से मिला है। इतिहास साक्षी है कि अपने-अपने युग में इन महापुरुषों ने अपने अहिंसा-दीप्त धर्म-चक्र-प्रवर्तन से हिंसा पीड़ित अराजक मानव-समाज को एक युगान्तरकारी मोड़ दिया था।

भगवान ऋषभदेव समाज-रचना के सूत्र-धार हैं, मानव-सभ्यता के प्रणेता हैं, असि, मसि और कृषि-व्यवस्था के द्वारा सामूहिक दायित्व के प्रवर्तक हैं। समाज-संरचना की सम्पूर्ण परिकल्पना के पीछे उनका विराट अहिंसा-दर्शन छुपा हुआ है। उनका सारा चिन्तन एवं अभिक्रम समाज-सम्मुख है, विमुख नहीं।

भगवान महावीर की अहिंसा भी सम्पूर्ण प्रखरता और तेजस्विता से समाज की भूमिका पर अवतरित हुई है। व्यक्तिगत जीवन में तो वे पूर्ण अहिंसा-पुरुष हैं ही, किन्तु जहां कहीं भी वे खून और हिंसा देखते हैं, अहिंसा और अनुकम्पा का सावन आखों में लिए वहां पहुंच जाते हैं। यज्ञ हिंसा, दास-प्रथा, जाति-दंभ, सत्ता-मद, भाषा-अभिमान और नारी उत्पीड़न जैसी तत्कालीन दुःसाध्य सामाजिक बीमारियों का इलाज वे अहिंसा के मार्ग से ही सफलता पूर्वक करते हैं। कैवल्य-पूर्व तथा केवल-ज्ञान-प्राप्ति के पश्चात के घटना-प्रसंग उनके व्यापक अहिंसा पराक्रम के इतिहास-सम्मत प्रमाण हैं।

<u>तीर्थ-प्रवर्तन पावापुरी में क्यों?</u>

लगभग साढ़े बारह वर्षों के निरंतर तप और ध्यान-योग-साधना के पश्चात् भगवान महावीर को जंभिय ग्राम के

सीमान्त श्यामाक किसान के खेत में, विशाल शाल-वृक्ष के नीचे, ऋजुवालिका नदी के किनारे, दिन के अन्तिम प्रहर में, वैशाख शुक्ला दशमी को कैवल्य की प्राप्ति हुई। किन्तु दूसरे ही दिन वैशाख शुक्ला एकादशी को उन्होंने वहां से बहुत दूर पावापुरी को धर्म-तीर्थ-प्रर्वतन के लिए चुना। प्रश्न होता है अन्य अनेक नगर भी थे, कुछ तो पावापुरी की अपेक्षा बहुत समीप भी रहे होंगे। उनमें से किसी का भी चुनाव न करके भगवान ने पावापुरी का ही चुनाव क्यों किया?

इसका उत्तर भी बहुत स्पष्ट है। पावापुरी में उन दिनों सोमिल धनपति की ओर से एक विराट् यज्ञ का आयोजन था। वह एक ऐसा महायज्ञ था जिसमें न केवल मगध किन्तु सम्पूर्ण पूर्व तथा उत्तर भारत के शीर्षस्थ पंडित-गण भाग ले रहे थे। अपार जन-समुदाय उस महायज्ञ-ज्योति की ओर आकृष्ट हो रहा था। उन दिनों यज्ञों में पशुबलि का आम प्रवचन था, कहीं-कहीं नरबलि की प्रथा तक का उल्लेख मिलता है। भगवान महावीर को अहिंसा का सिंहनाद करना ही था। उस शंखनाद के लिए पावापुरी का वह महायज्ञ सहजतया एक स्वर्णिम अवसर था। भगवान वहां पहुंचे। उनकी अमृतवाणी से महायज्ञ का नेतृत्व करने वाले इंद्रभूति गौतम आदि ग्यारह महापंडितों का हृदय परिवर्तन हुआ। फिर उन्हीं ग्यारह महापंडितों ने ही तीर्थ-प्रवर्तन के साथ प्रारम्भ हुई महावीर की अहिंसा-क्रान्ति की कमान को संभाला। यह एक ऐसी महान् घटना थी जिसने न केवल यज्ञ-हिंसा की परंपरा को आमूलचूल झकझोर दिया, किन्तु इससे महावीर की अहिंसा क्रांति की भेरी पूरे पूर्वोत्तर भारत में गूंज उठी। यही वह कारण था जो जंभिय ग्राम से अत्यन्त दूर मध्यम पावा नगरी में सर्वज्ञ महावीर को धर्म-तीर्थ-प्रवर्तन के लिए खींचा था।

<u>दास-प्रथा-उन्मूलन के लिए महान् संकल्प</u>

महाश्रमण महावीर की घोर तपश्चर्या और सुमेरू की तरह अटल ध्यान-योग साधना की चर्चा अनेक जनपदों में विभक्त भारत में अविभक्त भाव से फैल रही थी। जो भी सुनता, श्रद्धा से वह नत-मस्तक हो जाता। महावीर इन श्रद्धा-अभिवन्दनाओं के प्रति सर्वथा निःस्पृह थे। उनकी नजर तो बंधन मुक्ति पर टिकी थी। अपने को भी वे बंधनों से मुक्त देखना चाहते थे और समाज तथा राष्ट्र को भी, पूरी मानव जाति को भी।

वह युग दास प्रथा के भयंकर कोढ से पीड़ित था। पशुओं की तरह ही बाजारों, हाटों तथा मेलों में मनुष्यों की बोलियां लगती थी। उन दास-दासियों का जीवन जानवरों से भी बदतर होता था। महावीर

अपने बचपन से ही इस अमानवीय प्रथा से उद्वेलित थे। उनके नयनों में वह पीड़ा कभी भी पढ़ी जा सकती थी।

आखिर अपने साधना-काल के बारहवें वर्ष में उन्होंने मन ही मन एक कठोर संकल्प ले लिया। वह संकल्प पूरे राष्ट्र को दास-प्रथा की भयंकर व्याधि से मुक्त करने का था। उस संकल्प के अनुसार महावीर नियत समय पर नगर में आहारचर्या के लिए निकलते किन्तु बिना आहार लिए ही स्थान पर लौट आते। ऐसा क्रम पांच-सात दिनों के लिए चलता तो शायद लोगों को पता भी नहीं चलता। लेकिन ऐसा करते-करते चार माह बीत गए। अब तो कौशाम्बी नगरी पूरी ही हिल उठी। सबके मुख पर एक ही चर्चा थी, महातपस्वी महावीर पिछले चार माह से आहार ग्रहण नहीं कर रहे हैं। ऐसा कठोर तप वे किसी ध्यान-योग के प्रयोग के तहत कर रहे थे, ऐसी बात भी नहीं थी। क्योंकि आहार चर्या के लिए वे नियमित रूप से नगर में भिक्षार्थ निकलते भी थे। लोग उन्हें अत्यन्त आदर और श्रद्धा-भावना से दान देना भी चाहते थे। फिर भी वे बिना कुछ लिए वापस लौट आते थे। इसका कारण यही हो सकता था कि उनको अपने अभिग्रह-संकल्प के अनुसार आहार सुलभ नहीं हो रहा था। किन्तु वह अभिग्रह या संकल्प क्या हो सकता है, इसका पता स्वयं कौशांबी नरेश शतानीक एवं उनका बुद्धिमान महामात्य सुगुप्त भी नहीं लगा सके, फिर जन-साधारण का तो कहना ही क्या?

ऐसा करते-करते पांच महीना और पचीस दिन बीत गए। सहसा पूरे शहर में 'अहो दानं-अहो-दानं' का दुंदुभि-नाद आर-पार पहुंच गया। लोगों ने जाना, भगवान महावीर का अभिग्रह पूरा हो गया। आज उन्होंने आहार ग्रहण कर लिया। इस संवाद के साथ यह जिज्ञासा स्वाभाविक थी किनहाथों को इस दान का सौभाग्य मिला। पर उसके उत्तर से सब कोई आश्चर्य चकित और अवाक् थे। क्योंकि उन हाथों का सम्बन्ध न किसी राज परिवार से था, न किसी श्रेष्ठि-परिवार से, न किसी ब्राह्मण या क्षत्रिय वर्ग से था और न वैश्य वर्ग से। वे हाथ थे एक दासी के और वह भी एक ऐसी अभागी दासी, जिसके हाथों में हथकड़ियां थीं पावों में बेड़ियां, मुण्डित सर पर शास्त्र के घाव थे, वस्त्र के नाम पर एक अत्यन्त साधारण कछोटा, जो तीन दिनों से भूखी थी और समाज द्वारा बार-बार पीड़ित और प्रताड़ित थी। उस दासी के हाथों से आहार जो मिला, वे थे उड़द के बासी बाकुले, जो उस समय पशुओं को खाने के लिए दिए जाते थे। महातपस्वी ने उन उड़द-बाकुलों से ही पांच माह और

पचीस दिन के तप की पूर्णाहुति की।

महावीर ने अपने तप की पूर्णाहुति में महत्व नहीं दिया राजमहल की मनुहारों को, धनपतियों की प्रार्थनाओं को, किन्तु सम्मान दिया एकपीड़ित-प्रताड़ित-अपमानित दासी के अंतर से निकली आंसू भरी पुकार को। यह कदम प्रकारान्तर से उस उच्च कुलीन समाज पर एक गहरी चोट थी। किन्तु अहिंसा के पुजारी कभी अपमान या चोट की भाषा में न सोचते है और न ही विश्वास करते हैं। उनका तो प्यार और सम्मान की भाषा में विश्वास होता है। महावीर ने एक दासी की अटूट आस्था और अक्षय भक्ति को जो प्यार और बहुमान दिया, उसने दास प्रथा के युग-दंश से तत्कालीन दलित समाज को सदा के लिए मुक्त कर दिया। वह दासी भी वन्दनीय और अभिनन्दनीय बन गई।

कौशाम्बी-नरेश शतानीक अपने अंतःपुर, मंत्री-परिवार तथा प्रतिष्ठित नागरिकों के साथ वहां स्वयं आए। उन्होंने उस सौभाग्यशीला दासी के चरणों की धूल को अपने माथे से लगाया। वह दृश्य कितना अद्‌भुत रहा होगा जहां एक पद-दलित दासी के चरणों में पूरे राज्य का वैभव विनत भाव से नत-मस्तक खड़ा था। इसके साथ ही तत्कालीन समाज उस दास प्रथा के अभिशाप से मुक्त हो गया।

उस दासी का नाम था वसुमती, जो इतिहास के पन्नों में महासती चंदनबाला के रूप में विश्रुत हुई। भगवान महावीर के विशाल साध्वी-तीर्थ का नेतृत्व सती-शिरोमणि चंदनबाला ने ही संभाला था।

<u>नारी-मुक्ति के प्रचेता</u>

एक बार आचार्य बिनोवाभावे ने वार्ता-प्रसंग में कहा था कि भगवान महावीर पहले इतिहास-पुरुष हैं जिन्होंने नारी-शक्ति के समर्थन में पूरे साहस और विश्वास के साथ आवाज उठाई थी। भगवान बुद्ध भी क्रांति-चेता थे, किन्तु इस दिशा में वे भी पूरा साहस नहीं दिखा पाए थे। भगवान महावीर ने अपनी तीर्थ स्थापना में नारी जाति को समान स्थान और अधिकार दिए। नारी जाति को उस युग में शिक्षा का अधिकार तो था ही नहीं, धर्म-शास्त्र-श्रवण से भी उसे वंचित रखा जाता था। नारी-मुक्ति-प्रचेता के रूप में भगवान ने ज्ञान-आराधना, धर्म-साधना और निर्वाण तक की अर्हता नारी-समाज को प्रदान की।

<u>जातिवाद का निरसन</u>

महावीर ने जाति के आधार पर श्रेष्ठता या हीनता की तत्कालीन सामाजिक अवधारणा का निरसन किया। उनके धर्म-तीर्थ में ब्राह्मण, श्रत्रिय और वैश्य-वर्ग की तरह शूद्र वर्ग के व्यक्ति भी सम्मिलित हुए। उन्होंने

व्यवस्था दी कि धर्म-तीर्थ में सम्मिलित व्यक्ति न ब्राह्मण और क्षत्रिय है, न वैश्य और शूद्र। वह मात्र श्रमण है या श्रमणोपासक। इतना ही नहीं, चाण्डाल-पुत्र महामुनि हरिकेशबल की प्रशंसा में आगम साहित्य में उन्होंने मुक्त कंठ से कहा-

सक्खं खु दीसई तवो विसेसो
न दीसई जाई-विसेस कोई

...साक्षात् दीख रही है तप की महिमा, नहीं है यहां जाति-गत विशेषता। उन्होंने अपनी धर्म-क्रांति में जन्मना नहीं, कर्मणा श्रेष्ठता की व्यवस्था दी।

जन भाषा में प्रवचन

राज-मद, जाति-मद की तरह भाषा-मद भी उस समय अपने चरम उत्कर्ष पर था। कुलीन वर्ग की भाषा संस्कृत थी। उसे देव-भाषा भी कहा जाता था। स्त्री तथा शूद्रों को संस्कृत भाषा न सीखने का अधिकार था, न बोलने-सुनने का। धर्म प्रवचन भी संस्कृत में ही होते थे।

भगवान महावीर ने घोषणा की कि उनके प्रवचन संस्कृत में नहीं, जन-भाषा में होंगे। इसीलिए जैन आगम तत्कालीन जन-भाषा अर्धमागधी प्राकृत में संकलित हैं।

इस प्रकार भगवान महावीर ने पूरे देश में स्वतंत्रता, समता तथा समानता के मूल्यों की प्रतिष्ठा के लिए एक सफल अहिंसात्मक क्रांति का सूत्रपात किया। वे संभवतः प्रथम इतिहास-पुरुष हैं जिन्होंने अहिंसा में से महान् पराक्रम प्रकट करके युग-धारा को एक युगान्तरकारी दिशा प्रदान की।

वर्तमान युग में महात्मा गांधी ने एक महान् देश को गुलामी की बेड़ियों से मुक्त करके विश्व-राजनीति में अहिंसा के मूल्यों की प्रतिष्ठा की। प्रश्न फिर वही है जिस परंपरा को भगवान महावीर जैसा महापराक्रमी अहिंसा-नायक मिला, वह अपने हजारों वर्षों के इतिहास में भी अहिंसा में से किसी वीर्य पराक्रम को प्रकट क्यों नहीं कर सकी? विश्व पटल पर वह अहिंसा की सकारात्मक प्रखरता क्यों उद्भावित नहीं कर सकी? विश्व-शांति के नाम पर बनने वाले विनाशकारी शस्त्रास्त्रों के खिलाफ वह अहिंसा को एक सशक्त समर्थ विकल्प के रूप में खड़ा क्यों नहीं कर सकी।

मुझे नहीं पता अहिंसा प्रतिष्ठा के इस संदर्भ में जैन परंपरा को अपनी भूमिका का अहसास है भी अथवा नहीं? वह इस दिशा में सोचने के लिए तैयार है भी अथवा नहीं? यह तब ही संभव है जब अपनी नकारात्मक जड़-क्रियात्मक अहिंसा-शैली के स्वरूप में परिवर्तन करने का उसमें साहस हो। अपनी जड़ परंपराओं को उसी तरह ढोते हुए अहिंसा विज्ञान और अहिंसा-प्रशिक्षण की बातें बेमानी ही प्रमाणित होती है।

साधु-चर्या

○ संघ प्रवर्तिनी साध्वी मंजुलाश्री

आत्म-साधना करने वाला साधु होता है। अध्यात्म-साधना का प्रारम्भिक रूप है संकल्पों की स्वीकृति। पांच महाव्रतों का स्वीकरण साधना का प्रथम सोपान है और भावना-योग से पांच महाव्रतों में आत्म-रमण करना साधना का चरम विकास है।

पांच महाव्रतों की साधना का क्रम हर दर्शन और धर्म-सम्प्रदाय ने नाम-भेद या क्रम-भेद के रूप में स्वीकार किया है।

पांच महाव्रतों के नाम हैं-

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य ओर अपरिग्रह। इन पांच महाव्रतों की पूर्ण साधना करने वाला श्रमण और आंशिक साधना करने वाला गृहस्थ श्रावक कहलाता है।

महाव्रतों के दो रूप हैं- भावना-प्रधान महाव्रत और क्रिया-प्रधान महाव्रत।

पांच महाव्रत व्यावहारिक से कहीं अधिक आन्तरिक हैं। व्यवहार में चाहे किसी जीव का वध हो गया, किन्तु आन्तरिक भावना शुद्ध है और व्यक्ति प्रमाद व कषाय से उपरत है तो वह अहिंसक है। अतः व्यवहारों में महाव्रतों के आधार पर व्यक्ति की साधना-शीलता को नहीं परखा जा सकता। साधक की व्यावहारिक परख के लिए कुछ व्यावहारिक सीमा रेखाएं हैं, जो प्रतिदिन की चर्या के अंग हैं। वही क्रिया प्रधान महाव्रत का रूप है। उसके आधार पर यह निर्णय किया जा सकता है कि अमुक व्यक्ति साधक है या नहीं?

अहिंसा महाव्रत का क्रियात्मक रूप है, जीवन की आवश्यक क्रियाओं में हिंसा से बचाव।

जीवन की प्राथमिक आवश्यकता है भोजन-पानी। जैन मुनि के लिए वैसा भोजन-पानी कभी स्वीकार नहीं करने का विधान है जिसमें मुनि को निमित्त बनाकर हिंसा की गई हो। अर्थात् जैन मुनि वह

भोजन नहीं ले सकते, जो उनके लिए बनाया गया हो। उनके लिए खरीदा गया हो। उनके लिए अदल-बदलकर या छीनकर दिया गया हो। जैन श्रमण वैसाा आहार-पानी, औषधि व वस्त्र भी नहीं ले सकते, जो वस्तु सचित वस्तु से मिश्रित हो। सचित को छूती हो अथवा साधुओं को उनके स्थान पर लाकर दिया गया हो।

जैन श्रमण भिक्षोपजीवी होते हैं। वे जीवन की आवश्यकता की समस्त वस्तुएं भिक्षा से प्राप्त करते हैं। उसमें भी अहिंसा का पूरा ध्यान रहता है। रात्रि-भोजन का परिहार भी अहिंसा की परिपुष्टि के लिए ही है। जैन संत गमनागमन में किसी वाहन का उपयोग नहीं करते। उसमें भी अहिंसा और अपरिग्रह का सिद्धांत ही मुख्य रूप से कारण है। स्वावलम्बन तो अपने आप सध जाता है।

जैन साधुओं का जीवन श्रम-प्रधान होता है। उनके प्रत्येक कार्य में स्वावलम्बन झलकता है। वे बड़े से बड़ा और छोटे से छोटा काम स्वयं अपने आप अथवा परस्पर करते हैं। पर गृहस्थ लोगों की सेवा से यथासंभव बचने का प्रयत्न करते हैं। और तो क्या उत्सर्ग-विधि में भी हरिजनों की सेवा नहीं लेते।

केवल कायिक हिंसा का परिहार ही नहीं, मानसिक और वाचिक हिंसा का वर्जन भी उतना ही आवश्यक माना गया है।

मानसिक अहिंसा के पालन-हेतु मान और अपमान, गाली और पूजा दोनों ही परिस्थितियों में समता का व्यवहार किया जाता है। शत्रु और मित्र के साथ एक-रूपता बरती जाती है। कदाचित् वृतियों में उच्चावच भावनाएं आ जाएं या प्रमाद व असावधानीवश या जान-अनजान में कोई असत् आचरण, प्रवृत्ति या भावना उभर जाए तो उसके लिए प्रतिदिन दो समय प्रतिक्रमण किया जाता है।

दोनों समय, वस्त्र, पात्र, शय्या, संस्तारक आदि उपधियों का प्रतिलेखन भी अहिंसा तत्त्व की पुष्टि के लिए ही होता है।

वाचिक हिंसा के जो हेतु हैं, उनका वर्जन करने के उद्देश्य से साधु न भविष्यवाणी करते हैं, न व्यापार सम्बन्धी संकेत देते हैं, न मर्मवेधी भाषा बोलते हैं। मुनिजन हस्तरेखा, ज्योतिष, नक्षत्र और स्वप्न, शकुन आदि के विषय में भी मौन रहते हैं।

अहिंसा की तरह सत्य की अखण्ड आराधना भी मुनि का जीवन-धर्म है। असत्य तो दूर, कटु और हिंसाकारी यथार्थ भी साधु के लिए वर्जित है।

अचौर्यव्रत की आराधना में किसी के मकान में बिना इजाजत नहीं रहना। जिस देश या शहर में रहे वहां की सरकार और

नगरपालिका के नियम-विधानों का बिना बाध्यता के स्वतः सावधानी से पालन करना। अचौर्य का और अन्तिम बिन्दु एक ही है, भगवान की आज्ञा के विरुद्ध एक भी कार्य ने करना।

ब्रह्मचर्य व्रत में मनसा, वाचा, कर्मणा, शारीरिक सम्पर्क तो वर्जित है ही, साथ ही साथ समग्र इन्द्रियों का संयम भी इसकी परिधि में परिगणित है। इसकी व्यावहारिक भूमिका में साधु के लिए स्त्री का और साध्वी के लिए पुरुष का स्पर्श मात्र वर्जित है।

अपरिग्रह व्रत में धन-धान्य, जमीन-जायदाद तो त्याज्य है ही, साथ ही साधना के लिए उपयोगी उपकरणों पर मूर्च्छा-भाव का निषेध है। शरीर के ममत्व को भी परिग्रह की कोटि में लिया गया है।

इन पांच महाव्रतों के अतिरिक्त और भी अनेकानेक मर्यादाएं, परम्पराएं जीवन-चर्या को कसे हुए हैं।

साधना के लिए योगाभ्यास भी आवश्यक है। प्राणायाम, जाप, ध्यान, स्वाध्याय आदि दैनिक क्रियाओं के अतिरिक्त जो समय रहता है उसमें अपनी साधना के साथ जन-जीवन का कल्याण करना भी मुनि का कर्तव्य होता है।

इसी स्व-पर कल्याण की प्रेरणा से प्रेरित मुनि-जन लोगों में प्रवचन करते आध्यात्मिक प्रयोग सिखाते हैं। तात्त्विक ज्ञान देते हैं। इस तरह अपनी चर्या में व्यस्त हैं। दिनचर्या में परम आनन्द का अनुभव करते हुए स्वयं के जीवन को कृतार्थ बनाते है तथा लोक-जीवन के लिए उपयोगी सिद्ध होते हैं।

साधु-साध्वियां अपनी साधना व कर्तव्य में तल्लीन रहते हुए ज्ञान, कला, साहित्य और सेवा के क्षेत्र में भी कीर्तिमान स्थापित करते हैं।

इस तरह की दिनचर्या में जीने वाले साधकों का जीवन कितना उपयोगी, कितना निश्चिंत, कितना स्वावलम्बी और कितना आह्लादकारी होता है, उसे शब्दों में बांधना कठिन है।

वस्तुतः तो साधु-संन्यासियों का जनसंपर्क मात्र संविभाग के उद्देश्य से होना चाहिए। यानी संतजनों ने अपनी साधना से जो सत्य, ज्ञान, आनन्द और शान्ति प्राप्त की है, उसका उपभोग केवल वे ही न करें, अपने परिपार्श्व को भी करने दें। संविभाग भारतीय संस्कृति का महान सूत्र है। साधु-सन्तों के धर्म-प्रचार के पीछे यही भावना छिपी रहती है। जो मुनि अपनी ख्याति, नाम, बड़प्पन और प्रभाव जानने के लिए धर्म-प्रसार करता है, वह अपनी क्रिया को निष्फल बनाता है।

(शास्त्र-विहित मुनि-चर्या का निर्देश इस निबन्ध में है।)

हंस अकेला

{उपन्यास-शैली में आचार्यश्री रूपचन्द्र की जीवन-गाथा}

○ डॉ. विनीता गुप्ता

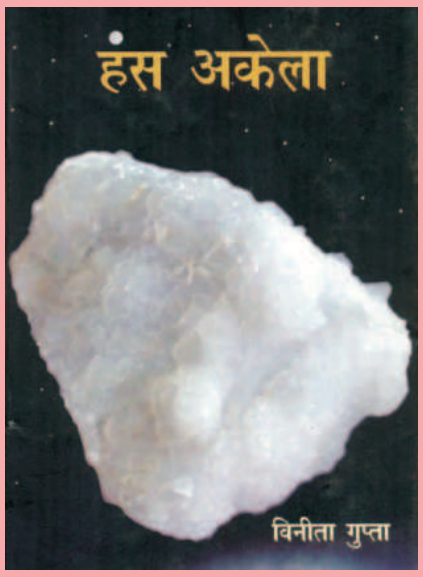

गतांक से आगे-

'रूपा उठ, जरा भाई बुधमल जी के यहाँ से वो लौंग की डिबिया ले आ। कल शाम को मैं वहाँ भूल आया था।' सुबह-सुबह पिताजी का यूँ उठाना रूपा को भा नहीं रहा था। सुबह उठने में तो उसे वैसे भी बहुत आलस्य आता था। रूपा दूसरी तरफ करवट बदल कर लेट गया, जैसे उसने कुछ सुना ही नहीं।

'रूपा सुन रहा है या नहीं? तुझे जाने के लिए बोला है भाई बुधमल जी के यहाँ।' जयचन्दलाल का स्वर थोड़ा कड़क हो गया था। अब यह उठाना भाई रतनलाल की तरह उठाना तो था नहीं कि रूपा बहस करने लगता- 'आप ही जा के ले आओ।' मजबूरी में उठना पड़ा।

'जाता हूँ।' अनमना-सा रूपा उठा। मुँह पर पानी के छींटे डाल चल दिया हवेली की तरफ। सुबह की ठंडी-ठंडी बयार बहुत मनमोहक थी। रूपा सोच रहा था- काश! पतंग लेकर आता। पाँच मिनट में रूपा बाबोसा की हवेली में पहुँच गया। सीढ़ियां चढ़कर मुख्य आँगन में पहुँचा, आवाज लगाई, 'बाबोसा...।'

'अरे! रूपा तू, इतनी सुबह-सुबह'- यह आवाज बुधमल जी की पत्नी की थी, जिन्हें रूपा बडिया जी कहकर बुलाता था। रूपा ने बडिया जी को देखकर उनके पैर छुए और अपने आने का कारण बताया।

'तेरे बाबो- सा ने रखी होगी डिबिया। तू ठहर अभी तो वो नहा रहे हैं। तूने कुछ खाया-पिया या नहीं?' बडिया जी ने लाड़ से पूछा।

'अभी बिस्तर से उठकर आ रहा हूं।' रूपा ने जबाब दिया। बडिया जी रसोई में चली गईं। शायद उन्होंने चूल्हे पर कुछ चढ़ा रखा था।

रूपा ने आसपास देखा। उसे कुछ सूझ नहीं रहा था कि क्या करे। वह बाहर बैठक कक्ष में आकर मसनद के सहारे बैठ गया, जैसे बड़े लोग बैठते हैं। दो-तीन मिनट बैठा। उसकी नजरें दीवार पर बने दो छेदों पर टिक गईं। ये छेद क्यों? छेदों का आमंत्रण ठुकरा नहीं सका रूपा! उठा और सीधा छेदों के पास पहुँचा। दिमाग में आया कि इसमें उंगली डालकर देखा जाए क्या है। सबसे छोटी उंगली ही छेद के आकार में आ सकती थी। जैसे ही रूपा की उंगली छेद के अन्दर गई, तेज झटका लगा। रूपा को लगा किसी ने अचानक आकर उसे धक्का दिया। पीछे मुड़कर देखा। कहीं कोई नहीं था। कहीं चक्कर तो नहीं आ गया। बाल जिज्ञासा। रूपा ने दुबारा उंगली छेद में डाल दी कि इस बार हटाऊंगा नहीं। लेकिन इस बार भी तेज झटका लगा। पहले से कहीं ज्यादा तेज। इस बार झटके से वह अपने को संभाल नहीं पाया, गिर गया। आँखें फटीं की फटीं, आखिर बात क्या है?

जब तक वह उठता और तीसरी बार उस छेद में उंगली डालता, बाबो-सा बैठक में आ गए थे। रूपा काँप रहा था।

'रूपा क्या हुआ? काँप क्यों रहा है?' बुधमल ने पूछा।

मारे घबराहट के रूपा की आवाज नहीं निकल रही थी। उसने उंगली से छेदों की तरफ इशारा किया। बुधमल को समझते देर नहीं लगी। उन्होंने रूपा की उंगली सहलाई। पानी मंगा कर पिलाया और बताया- 'यह बिजली का प्लग है और बिजली तेज करंट मारती है। आगे से कभी ऐसे ही किसी छेद-वेद में हाथ नहीं लगाना, समझे।'

रूपा बैठक में है, यह बुधमल को पता था। क्यों आया है, इसका अंदाजा भी हो गया था। रूपा को डिबिया थमाते हुए फिर कभी ऐसी हरकत न करने की हिदायत देते हुए वापस भेजा। बुधमल के घर आने के पीछे बच्चों में एक आकर्षण था उनके घोड़े। वे घोड़ों के बड़े शौकीन थे। शुभकरण को इन घोड़ों से प्यार था। वह अक्सर घोड़ों को फिराने जाता था। जाते समय रूपा भी घोड़ों को देखना नहीं भूलता।

x x x

तीस जनवरी, उन्नीस सौ अड़तालीस पूरे देश में शोक की लहर थी। महात्मा गांधी की हत्या ने देशवासियों को झकझोर कर रख दिया था। रेडियो के जरिए गांधी जी की हत्या का समाचार सरदारशहर तक भी पहुँच गया। सम्पत राम दूगड़ विद्यालय में शोक सभा का आयोजन किया गया। रूपा जानता था कि महात्मा गांधी राष्ट्रपिता हैं।

उन्होंने देश की आजादी में बड़ी भूमिका निभाई है। अभी देश को आजादी मिले डेढ़ साल ही बीते थे। बच्चे-बच्चे की जुबाँ पर गांधी का नाम था।

रूपा महात्मा गांधी के नाम से खूब परिचित था। उसे पता चला कि गांधी जी की हत्या कर दी गई। सहसा उसकी आँखों के आगे सरदारशहर के गढ़ के सामने दो-तीन साल पहले हुई एक विशाल सभा के दृश्य विचरने लगे। उसके कानों में खादी की धोती पहने गीत गा रही बहन जी के स्वर गूँजने लगे-

'अगर है राष्ट्र गीत गाना,
पहन लो खादी का बाना...'

कैसा मधुर स्वर था उन बहन जी का। सफेद खादी की धोती में वे औरों से कितनी अलग लग रही थीं रूपा ने ऐसा वेश पहली बार देखा था। मन हुआ था उनके पास जाकर पैर छुए। लेकिन बहुत दूर मंच पर थीं वे। 'महात्मा गांधी की जय,' 'भारत माता की जय' के नारों से सभा-स्थल गूँज रहा था। रूपा को बताया गया था कि यह गांधी जी के अनुयायियों की टोली है। देश आजाद करने के लिए देशभक्तों को जगाने उनका मार्गदर्शन करने निकली है। कई दिन तक बालक रूपा के मन में इस सभा का दृश्य घूमता रहा।

महात्मा गांधी जी की हत्या का समाचार सुन रूपा का मन सुबह से ही व्यथित था। अनमना-सा वह घर से स्कूल के लिए निकला। रास्ते भर डेढ़ साल पहले की घटनाएं उसके मन को मथ रही थीं। देश की आजादी की घोषणा सुनकर सबके चेहरे खिले हुए थे। बालक रूपा सबके चेहरों को बड़े गौर से पढ़ता था। देश की स्वतंत्रता के पर्व को वह कैसे भूल सकता था। सहसा उसकी आँखों के आगे उस ऊंट गाड़ी का दृश्य घूम गया। गाड़ी के पहियों की चर्र-मर्र कैसे 'भारत माता की जय,' 'महात्मा गांधी की जय' और 'भारत देश अमर रहे' नारों में विलीन हो गई थी। स्वतंत्रता पर्व मनाने के लिए विद्यालय की ओर से एक प्रभात फेरी का आयोजन किया गया था। सुबह सात बजे तक विद्यालय में सभी बच्चे पहुँच गए थे। अच्छा गाने वाले पाँच बच्चों को पहले ही गाने का अभ्यास करा दिया गया। इन पाँचों को ऊँटगाड़ी पर खड़ा कर दिया गया था। इनमें एक बच्चा रूपा भी था। रूपा खुद को कितना गौरवान्वित अनुभव कर रहा था उस दिन। आगे-आगे ऊँटगाड़ी चल रही थी। पीछे-पीछे विद्यालय के बाकी बच्चे। ऊँटगाड़ी से आ रही पाँचों बच्चों की स्वर लहरियों का अनुकरण बाकी बच्चे कर रहे थे। इस समय रूपा को उन गीतों में से सिर्फ एक गीत ही याद आ रहा था-

'भारत का झंडा आलम में,
फहराया वीर जवाहर ने...'

यों विचारों में डूबता-उतराता रूपा कब विद्यालय पहुँच गया, पता ही नहीं लगा। सुबह प्रार्थना के लिए रोज की तरह सब बच्चों को विद्यालय के विशाल प्रांगण में बुलाया गया। प्रार्थना समाप्त होते ही प्रधानाचार्य रामचन्द्र जैन का वक्तव्य शुरू हुआ। उन्होंने महात्मा गांधी जी का परिचय दिया। भारत की स्वतंत्रता के आंदोलन में उनके योगदान को रेखांकित करते हुए बताया कि किस प्रकार दिल्ली में राष्ट्रपिता की हत्या कर दी गई। बोलते-बोलते प्रधानाचार्य का गला भर्रा आया। ज्यादातर बच्चे मास्टर जी के चेहरे को ताक रहे थे। कुछ पीछे पंक्ति में बैठे हमेशा की तरह बातों और शरारत में व्यस्त थे।

'अब हम सब अपने राष्ट्रपिता को श्रद्धांजलि देने के लिए दो मिनट का मौन रखेंगे...।' मास्टर जी ने कहा। रूपा ने गौर से देखा मास्टर जी की नम आँखों से आँसू निकले। उन्होंने झट से उन्हें पोंछा और फिर सब बच्चों और शिक्षकों को दो मिनट का मौन रख राष्ट्रपिता को श्रदांजलि देने के लिए कहा। मौन की भी एक दहाड़ होती है, जिसे सुनने का प्रयास वह कर रहा था। राष्ट्रपिता के प्रति उसके संवेदनशील मन में गहरी श्रद्धा थी। क्यों गोली मारी? कैसे गोली मारी?... प्रश्न उसके मन को मथ रहे थे। तभी उस मौन में से कुछ बच्चों की हँसी रूपा को तीर की तरह बेध गई। दो मिनट का मौन समाप्त हो गया, किन्तु बच्चों की हँसी रूपा को व्यथित करती रही। राष्ट्रपिता को श्रद्धांजलि देने के बाद विद्यालय में छुट्टी कर दी गई। बच्चे बड़े खुश थे कि पढ़ाई से छुटकारा मिला। कोई अन्य दिन होता तो रूपा भी छुट्टी के नाम से गद्‌गद हो उठता कि अब पूरे दिन पतंग उड़ाएंगे और गुल्ली-डंडा खेलेंगे। लेकिन आज बेहद थके मन से वह घर पहुँचा। भीतर की पीड़ा उसके चेहरे पर झलक रही थी। पाँची देवी ने रूपा को देखा तो मन में खटका हुआ। अभी इतनी बड़ी बीमारी से उबरा है।

'क्या बात है रूपा, ये मुँह क्यों लटका रखा है? तबीयत तो ठीक है न?' पाँची देवी ने रूपा को पास बुलाकर पूछा।

'माँ तबीयत ठीक है। वो बच्चे...। स्कूल के...'। रूपा का स्वर ऐसा था, जैसे अभी रो पड़ेगा। पाँची देवी को लगा कि बच्चों ने मारपीट की है रूपा के साथ। बीमारी के कारण रूपा वैसे भी बहुत दुबला हो गया था। 'मारपीट हुई क्या आपस में?' पाँची देवी ने पूछा- रूपा अपनी रुलाई न रोक सका। रुंधे गले से बोला- 'माँ आज स्कूल में गांधी जी को श्रद्धांजलि देने के लिए

दो मिनट का मौन रखा गया। कुछ बच्चे हँस रहे थे। माँ राष्ट्रपिता की हत्या में हँसी की क्या बात थी?' पाँची देवी को नहीं मालूम था कि रूपा का मन संवेदनशील है। व्यथित रूपा को समझाने के लिए उन्होंने कहा, 'हाँ, बेटा कुछ बच्चे बहुत नासमझ होते हैं। उन्हें अपनी शरारतों के अलावा कुछ नहीं सूझता। ऐसे नासमझों के कारण अपना मन दुःखी नहीं करते। तुमको अपना देखना चाहिए कि मैं कितना ठीक हूँ। बेटा, सबको तो ठीक नहीं किया जा सकता ना।'

रूपा इस विषय पर माँ से और बात नहीं करना चाहता था। सोचता रहा कि बच्चे क्यों हँसे? क्या उन्हें राष्ट्रपिता की मृत्यु का शोक नहीं। वह छुट्टी का दिन रूपा ने बिना पतंग उड़ाए बिता दिया। अपने कमरे में गया और एक किताब उठा ली पढ़ने के लिए। बहुत दिन से मन था उसे पढ़ने का। उसमें भक्त प्रहलाद और ध्रुव की कहानियां थीं। विद्यालय की पढ़ाई और पतंग उड़ाने में ही समय निकल जाता था।

प्रभु-भक्ति के अनुपम उदाहरण, प्रह्लाद और ध्रुव की कथाओं ने रूपा को भीतर तक झकझोर दिया था। प्रभु-भक्ति में इतनी शक्ति है! रूपा आश्चर्यचकित था। कई दिनों तक इन प्रसंगों को लेकर उसके मन में उथल-पुथल रही।

x x x

यूँ तो दूगड़ परिवार में रूपा सभी का लाड़ला था लेकिन कन्हैयालाल दूगड़ जी का उस पर विशेष स्नेह था। वे संगीत के जानकार थे। रूपा में संगीत की संभावनाओं को उन्होंने काफी पहले परख लिया था। छुटपन से ही रूपा अक्सर उनके पास जाया करता था।

'तूने हीरा सा जनम गँवाया...' भजन नन्हे रूपा के मुँह से सुनकर वे भाव-विभोर हो जाते थे। सरस्वती का वरदान मिला था रूपा को। स्वर, लय और ताल की पावन त्रिवेणी थी रूपा के भीतर। रूपा संगीत सीखना चाहता था। घर में मेज हो, दीवार, या फिर कोई डिब्बा मिल जाए। रूपा उसे तबले की तरह बजाने लगता। इस आदत के लिए कई बार उसे घर में डाँट भी पड़ चुकी थी! एक बार रूपा को पता लगा कि सरदारशहर में ग्वालियर से एक संगीत शिक्षक मास्टर सदाशिव आए हैं। बस उनसे गाना सीखने की जुगत भिड़ा ली। वहाँ संगीत शिक्षा का क्रम टूटा तो मंगलदास से हारमोनियम और तबला सीखने लगा। हारमोनियम के साथ भजनों में रूपा का स्वर फूल सा खिल उठता।

'पग घुंघरू बांध मीरा नाची रे...।'

x x x

‘गहरी नदिया दूर किनारा.ऽऽ’
खेवनहारा है मतवारा..
तुम बिन कोउ नहीं सहारा
हे निर्बल की टेर सुनैया
पार करो अब मोरी नैया ...’

गाते हुए रूपा का मन-मयूर पंख फैला कर नाचने लगता। रूपा चाहता था कि घर में तबला और हारमोनियम आ जाए तो वह घंटों अभ्यास करेगा। लेकिन आए तो आए कैसे, यही उधेड़बुन रहती। एक दिन जयचन्दलाल को किसी काम से दिल्ली जाना था। दिल्ली जाना है तो बच्चों के लिए कुछ न कुछ लाना भी है। उन्होंने सब बच्चों से पूछा कि बताओ उनके लिए क्या लाया जाए। सबने अपनी बात रख दी। रूपा की बारी आई-

‘बोल रूपा तेरे लिए क्या लाऊं, दिल्ली से?’ जयचंदलाल रूपा की उत्सुकता देख रहे थे कि वह क्या कहेगा। यही कि अच्छी-सी पतंग। पतंग के अलावा तो यह कुछ सोच ही नहीं सकता। जयचन्दलाल जानते थे।

‘आप तबला ले आना दिल्ली से...’ रूपा के मुँह से तबले की बात सुनकर जयचन्दलाल का मन कसैले स्वाद से भर गया।

‘बस अब घर में तबले ही बजेंगे और क्या?’ रूपा को पिता जी की बात अच्छी नहीं लगी। उसी समय अपनी इच्छा को उसने धरती में दस गज नीचे गाड़ दिया।

धीरे-धीरे संगीत की विधिवत् शिक्षा पीछे छूटती गई। संस्कारों में संगीत निश-दिन पल्लवित होता रहा। जब तब कोई न कोई प्रसंग उसकी हरियल टहनियों को हवा देता रहता।

x x x

वायदे

-विष्णु सक्सेना

तुम्हारे वायदे
चौराहे पर लगे
विज्ञापनों की तरह
जो प्रायः रातों रात
उतार दिए जाते है,
समय की मांग पर
नए विज्ञापन
लगाने के लिए!

तालबद्ध शब्द

○ साध्वी मंजुश्री

मन्त्रों का उच्चारित शब्द एक ताल में करने से यानी धारा प्रवाह करने से शक्ति प्रकट होती है। यूनान की एक महिला हारमोनियम पर तीन चार स्वरों को तालबद्ध बजाती थी। उसका परिणाम यह आया कि जिस कक्ष में वह अभ्यास करती थी उस कमरे की छत फट गयी। इसी प्रकार भरूच नगर के एक पुरानी पुल पर सैनिक लेफ्टराइट का तालबद्ध उच्चारण कर रहे थे। उनके तालबद्ध उच्चारण से चलते-फिरते व्यक्ति स्तम्भित हो जाते। लोगों को उनके तालबद्ध उच्चारण से पुल टूटने की सम्भावना बढ़ गयी थी।

अभिप्राय यह कि तालबद्ध शब्दों के उच्चारण से अनुभूत प्रयोग है कि रोग 'आवेशित' होकर रोगी पर से अपना प्रभाव खत्म कर देते हैं।

अभिमन्त्रित जल का प्रभाव

सोलापुर में एक जैन गृहस्थ था। वह प्रातःकाल एक ही मन्त्र ह्रींकार का जाप करता फिर पानी को निमन्त्रित करता। उस पानी को लेने आये लोगों में थोड़ा-थोड़ा वितरित कर देता। लोगों को उस पानी से लाभ होने लगा। धीरे-धीरे सैकड़ों लोग उस साधक का अभिमन्त्रित जल लेने के लिए जुटने लगे।

उन लोगों से पूछा गया- तुम्हें पानी से क्या लाभ होता है? उनका उत्तर होता था- लाभ न हो तो हम पानी लेने क्यों आये हैं? सभी ने पानी ग्रहण करने के बाद से जो-जो लाभ हुए, उनका विस्तार से वर्णन कह सुनाया।

यन्त्र प्रक्षालन से लाभ

पाठकों को पता है। ह्रींकार मन्त्र जाप भी है और इसकी यन्त्र स्थापना भी की जाती है। ह्रींकार यन्त्र के प्रक्षालन (धोने या स्नान) का पानी एक कलश में भरा जाता है। ओम् ह्रीं अर्हम् नमः मन्त्र को 108 बार बोल कर अभिमन्त्रिण किया जाता है। उस पानी को आचमन कराने से रोग नष्ट हो जाता है। रोगी को पूर्ण आस्था अवश्य होनी चाहिए।

अन्य बीज : एक अन्तिम तथ्य

श्रीं बीज मन्त्र जप करने से ऐश्वर्य की प्राप्ति और सौन्दर्य की सुरक्षा होती है। इस बीज जाप से वचन सिद्धि होती है। 'ओम् ह्रीं अर्हम् नमः के जाप से सुख, शान्ति और मनोकामना पूरी होती है। चारों दिशाओं में यदि साधक शान्ति व्याप्त करना चाहता है तो प्रातः उठते ही, आंख खोलने से पहले ही चारों दिशाओं में क्रमशः मुंह करके तीन-तीन बार 'ओम् शान्ति' मन्त्र का उच्चारण करे। इससे सब तरफ शान्ति का

वातावरण व्याप्त हो जाता है। इस बात हो हृदयंगम करने की दृष्टि से इस उदाहरण को सामने रखा जा सकता है- जैसे शान्त जल में पत्थर फेंकने से जल में तरंगें उठती हैं, वे दूरान्त तक जाती हैं। ऐसे ही शब्द-शक्ति प्रेषण से शान्ति व्याप्त हो जाती है, इससे अन्तर और बाह्य जगत् में शब्द-शक्ति की तरंगें व्याप्त हो जाती है।

चुटकुले

1. एक आदमी रेलवे स्टेशन पर खडा था।
तभी उसकी जेब मे किसी ने हाथ डाल दिया।
आदमी ने कहा- अरे यह क्या कर रहे हो?
जवाब मिला- मै माचिस ढूंढ़ रहा था।
आदमी ने कहा- माचिस माँग नहीं सकते थे क्या?
जबाब मिला- मैं अजनबियों से बात नहीं करता।

2. एक बूढा अपने दोस्त से- लगता है ज्यों ज्यों उम्र बढती जा रही है... मेरे अंदर भी ताकत बढ़ती जा रही है।
दोस्त- कैसे?
बूढा- आज से दस साल पहले मैं सौ रुपये की चीनी बडी मुश्किल से उठा पाता था, पर आजकल मैं आराम से उठा लाता हूं।

3. एक खूबसूरत लड़की बस स्टैंड पर खडी थी। एक नौजवान बोला- चांद तो रात में निकलता हैं, आज दिन में कैसे निकल आया?
लडकी बोली- अरे उल्लू तो रात में बोलता है,
आज दिन में कैसे बोल रहा हैं।

4. एक व्यक्ति पहली बार अकेला हेलीकॉप्टर उडाना सीख रहा था। पांच सौ फुट की ऊंचाई पर उडते-उडते अचानक हेलीकॉप्टर नीचे आ गिरा।
प्रशिक्षक ने पूछा- क्या हुआ?
जवाब मिला- कुछ नहीं, ऊपर जाकर मुझे ठंड लगने लगी,
सो मैंने पंखे बंद कर दिए थे।

प्रस्तुति : सुपारस जैन

प्रायश्चित का पुरस्कार

बंग प्रदेश में 'मुर्शीदाबाद' नाम का एक छोटा-सा राज्य था। वहां सूरसेन नाम का राजा राज्य करता था। वह बहुत ही धार्मिक विचारों वाला था। वह प्रजा के दुख-दर्द को अपना ही दुख-दर्द मानता था। उसके राज्य में चारों ओर सुख-शांति थी। जनता भी इतना अच्छा राजा पाकर सुखी एवं संतुष्ट थी।

एक बार की बात है। राजा को कोढ़ की बीमारी हो गई। उसके अंग-अंग कोढ़ से गलने लगे। इस कारण राजा सबसे अलग रहने लगा। राजा का कष्ट प्रजा से भी नहीं देखा जा रहा था। सबकी यही कामना थी कि किसी तरह राजा को इस रोग से मुक्ति मिल जाए। अनेक बैद्य-हकीमों ने राजा का उपचार किया पर कोई फायदा नहीं हुआ। झाड़-फूँक और तंत्र विद्या वालों ने भी प्रयास किए। वे सभी निरर्थक ही साबित हुए। राजा का रोग दिनों-दिन बढ़ता ही गया। युवराज को शासन सौंपकर राजा वन में जाकर रहने की सोचने लगा।

एक दिन मैथिली राज्य के राजवैद्य वहां आए। उन्होंने राजा के रोग की परीक्षा की। परीक्षा करने के बाद राजा से बोले- 'इसका उपचार संभव है पर वह है बहुत कठिन। यदि आप मानसरोवर झील में निवास करने वाले राजहंस का मांस एक विशेष विधि द्वारा खाएं तो आप रोगमुक्त हो सकते हैं।'

उपचार लगभग असंभव था। मानसरोवर की यात्रा अत्यंत दुर्गम थी। वहां जाना सहज नहीं था। ऋषि-मुनि कई दिनों की यात्रा करके मानसरोवर पहुंचते थे। उनमें से बहुत सारे तो रास्ते में ही मर जाते थे। दूसरी परेशानी राजहंसों को पकड़ने की थी। उनके साथ धार्मिक भावनाएं जुड़ी हुई थीं। लोगों का मानना था कि राजहंस विलक्षण होते हैं। उन्हें पकड़ना आसान काम नहीं। इसलिए राजा ने यह उपचार करवाने का विचार त्याग दिया।

यह बात कनिक नाम के बहेलिये को पता चली। वह एक कुशल बहेलिया था। उसे बहेलिया-मंत्र का भी ज्ञान था। वह चाहता था कि राजा की प्राण रक्षा का उपाय किया जाए। वह महामंत्री के पास गया। उनसे बोला- 'हुजूर! मैं महाराज के लिए राजहंस ले जाऊंगा, चाहे मुझे कितनी ही कठिनाइयों का सामना करना पड़े।' महामंत्री यह सुनकर बहुत ही प्रसन्न हो गए।

उन्होंने बहेलिए को यह जिम्मेदारी सौंपते हुए कहा- 'कनिक! अब तुम पर ही

भरोसा है। इस काम को तुम्हीं कर सकते हो। अब और अधिक देर न करो। जितनी जल्दी हो सके, राजहंस लाने का यत्न करो।'

कनिक ने विचार किया कि मानसरोवर की यात्रा ऋषि-महात्मा ही करते हैं। इसीलिए राजहंसों की जानकारी उनसे ही जुटाई जानी चाहिए। वह उनके पास गया। उनसे मानसरोवर झील व राजहंसों के बारे में जानने की कोशिश की। उसने उन्हें अपना उद्देश्य नहीं बताया। फिर भी महात्मा लोग समझ गए। वे जान गए कि वह बहेलिया है और जरूर राजहंसों को पकड़ना चाहता है।

उन्होंने कहा- 'कनिक! वहां की यात्रा अत्यंत कठिन है। फिर राजहंसों को पकड़ना हंसी-खेल नहीं। वे सामान्य व्यक्ति के नजदीक भी नहीं आते। साधुओं के पास अवश्य चले जाते हैं। उन्हें उनसे तनिक भी खतरा महसूस नहीं होता।'

कनिक ने एक योजना बनाई। राजहंस को पकड़ने के लिए साधु वेश धारण करना बहुत जरूरी था। उसने ऐसा ही किया। वह साधु वेश धारण कर साधुओं की जमात में सम्मिलित हो गया। उनके साथ ही वह मानसरोवर की यात्रा पर चल पड़ा। कई दिनों की यात्रा के बाद वह मानसरोवर झील पहुंचा। उसकी निगाहें राजहंसों को ढूंढ रही थीं।

बहुत खोजने पर उसे राजहंस नजर आ गए। सचमुच वे एकदम सफेद, सुंदर और निर्मल थे। वे भोजन के रूप में असली मोती ही निगलते थे। उसने अपने जीवन में इतने सुंदर हंस कभी नहीं देखे थे।

बहेलिये ने देखा कि साधु-संतों के पास राजहंस स्वयं चले आ रहे हैं। साधु-संत उन पर हाथ फिराकर ढेर सारा प्यार उड़ेल रहे हैं। साधु और राजहंस आपस में बहुत हिले-मिले हुए थे। इतने सुंदर व भोले पक्षी को पकड़ना उसे उचित नहीं लगा। पर मन में एक ही बात थी कि राजा की जान बचाना बहुत जरूरी था, इसीलिए उसने हंस पकड़ना जरूरी समझा।

यह सोचकर वह झील के किनारे पहुंचा, हाथ-मुंह धोए और राजहंसों के आने का इंतजार करने लगा। शीघ्र ही उसकी इच्छा पूरी हो गई। वह साधु के वेश में तो था ही, सीधे-सच्चे राजहंस उसके पास चले आए। बहेलिये ने हाथ फिराकर उन्हें प्यार किया और फिर मंत्र के द्वारा उन्हें वश में कर लिया। फिर मौका देखकर उनमें से एक राजहंस को पकड़कर झोली में डाल लिया। इस तरह कनिक की मानसरोवर यात्रा का उद्देश्य पूरा हो गया। अब वह जल्दी-से-जल्दी राजा के पास पहुंच जाना चाहता था।

वह तुरंत वापसी की यात्रा पर चल

पड़ा। जल्दी ही वह मुर्शीदाबाद पहुंच गया। अभियान में सफल होकर लौटे बहेलिये का मंत्री ने स्वागत किया। वह उसे राजा के पास ले गया। मंत्री ने राजा को सारी बात बताकर प्रार्थना की कि वे राजहंस का मांस खाकर रोग से मुक्ति पा लें।

महामंत्री और बहेलिये की वफादारी से राजा बहुत प्रसन्न हुआ, लेकिन मानसरोवर झील के पवित्र राजहंस को खाना, राजा को अधर्म का काम लगा। उसने इस बारे में राजगुरु से पूछना जरूरी समझा।

राजा ने राजगुरु को सब-कुछ बताकर मार्गदर्शन करने का अनुरोध किया। राजगुरु ने कहा- 'राजहंस को धोखे से पकड़ा गया है। राजहंस साधु वेशधारी कनिक के पास सहज विश्वास से चला आया था। बहेलिये ने उसके साथ धोखा किया है। एक तो वह साधु नहीं था, दूसरा उसने साधु के वेश में राजहंस का हरण कर लिया। वह अपराधी है। यदि आप धोखे से पकड़े गए राजहंस का मांस खाते हैं तो यह अधर्म होगा। इसीलिए, हे राजन्! इस विश्वासघात के लिए प्रायश्चित करना जरूरी है। यह अपराध आपके लिए किया गया है। इस कारण यह प्रायश्चित आपको ही करना चाहिए।'

राजा को भी यही उचित लगा। वह राजहंस का मांस नहीं खाना चाहता था। वह बहेलिये की राजभक्ति से खुश था, पर राजहंस को धोखे से पकड़कर लाने से दुखी भी था। राजा ने राजहंस को वापस मानसरोवहर झील छोड़ आने का निश्चय किया। राजा को अब जीवन से कोई मांह नहीं रहा। उसे वैराग्य हो गया था।

बहेलिया भी कई दिनों तक साधुओं की संगत में रहा था। वह भी दुनियादारी छोड़कर साधु बनना चाहता था। इसलिए उसने राजा के साथ मानसरोवर जाने की इच्छा जताई। राजा ने उसे रोकना चाहा पर वह नहीं माना। इस तरह राजा और बहेलिया दोनों ही साधु बन गए। वे राजहंस को लेकर मानसरोवर की यात्रा पर चल पड़े।

रास्ते में एक बड़ी विचित्र बात हुई। मानसरोवर पहुंचने पर राजा ने देखा कि उनके शरीर पर कोढ़ का नामोनिशान नहीं रहा। राजा बिना उपचार के स्वस्थ हो गए। पता नहीं यह राजहंस के पंखों की हवा का कमाल था या प्रायश्चित का पुरस्कार! इसके बाद राजा ने वापस मुर्शीदाबाद लौटने का विचार त्याग दिया। वह वहीं रहकर तपस्या करने लगा। बहेलिया भी राजा के साथ रहने लगा था। अब वे दोनों तपस्वी बनकर राजहंसों के बीच रहने लगे।

-प्रस्तुति : साध्वी वसुमति

गुणों से भरपूर है अंगूर

अंगूर देश-विदेश सभी जगह का पसंदीदा फल है। अंगूर हरे, पीले, काले व लालिमा लिए हुए रंग के होते हैं। स्वाद में हरा व गुणों में काला अंगूर अच्छा माना जाता है। अंगूर में खनिज, आयोडीन, ग्लूकोज, रक्टोज तथा सामान्य शर्करा 22 प्रतिशत से भी अधिक होती है। इसमें विटामिन ए, बी, सी भी विद्यमान है।

अंगूर स्वस्थ मनुष्यों का पौष्टिक भोजन है तो रोगियों के लिए आरोग्यवर्धक पथ्य है। इसके सेवन से पेट की जलन व गैस दूर होती है। पाचन भली-भांति होता है। अंगूर खाने से मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है। याद्दाश्त तेज होती है। आधी सीसी का दर्द भी इस छोटे से अंगूर से दूर होता है। इसमें मौजूद साइट्रिक व टार्टारिक एसिड रक्त शुद्धि के साथ आंतों व किडनी के कार्य को सुव्यवस्थित करते हैं। इसी कारण यह पेशाब की समस्याओं में, किडनी रोग व पथरी में लाभ पहुंचाता है।

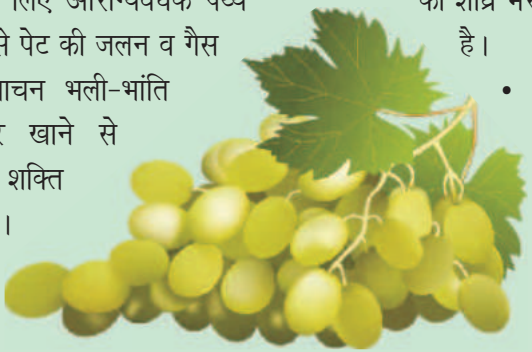

• अंगूरों का रस यदि नाक में डालें तो नकसीर बंद हो जाती है।

• प्यास लग रही हो तो अंगूर खाएं। इससे गला तर हो जात है।

• टीबी से ग्रस्त मरीज को अंगूर या मुनक्का खिलाना चाहिए।

• अंगूर का रोजाना सेवन जुकाम व कब्ज को दूर रखता है।

• महिलाओं में एनीमिया या खून की कमी भी अंगूर के सेवन से दूर होती है।

• नियमित अंगूर का सेवन शरीर के घावों को शीघ्र भरने में मदद करता है।

• यदि आप कुछ दिन अंगूरों पर ही रहेंगे तो चाय, कॉफी, सिगरेट, गुटका, तम्बाकू आदि से भी आप छुटकारा पाने में सफल हो पाएंगे।

• गर्भावस्था में अंगूर का सेवन बच्चे को स्वस्थ व पुष्ट बनाता है।

• कैंसर जैसे भयानक रोग में भी अंगूर एक औषधि का काम करता है।

• हर सुबह 100 ग्राम अंगूर का नियमित सेवन 40 दिनों तक करें, इससे खुद को ताजा और शांत महसूस करेंगे।

-प्रस्तुति : अरूण तिवारी

मासिक राशि भविष्यफल-अप्रैल 2017

मेष- इस राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से अवरोधों के पश्चात भाग्य साथ देगा। मास के प्रारंभ में धन लाभ सामान्य रहेगा उत्तरार्ध में सुधार की स्थिति में होगा। नए कार्य की योजना बन सकती है। कोई नया परिचय मित्रता में बदल सकता है। छोटी बड़ी यात्राऐं होगी। कोई धार्मिक अनुस्ठान भी संभव है। सेहत का ख्याल रखे।

वृष- इस राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से निर्वाह योग्य धन दिलाने वाला है। सुयोग्य व्यक्तियों से सलाह लेना कारगर सिद्धहोगा। कार्य के संपादन में परिश्रम से न घबराऐं। व्यस्तता अधिक रहेगी। परिवार में सामंजस्य बिठा पाएगे। चोट आदि का भय है। स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें।

मिथुन- इस राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की ओर से सर्तकता की अपेक्षा रखता है। अवरोधों के पश्चात धनागमन की आशा की जा सकती है। ध्यान रहे अपनी गल्ती से कोई कार्य बिगड़ न जाए। न चाहते हुए भी यात्रा करनी पड़ सकती है। मुश्किलों का समाधान अपने अन्दर ही ढूढ़ें। स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें। लेन देन में सावधानी बरतें। स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें।

कर्क- इस राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की ओर से परिश्रम के पश्चात सामान्य लाभ देने वाला है। किसी मद में व्यय अधिक होने की संभावना है। साझेदारी के कामों से सचेत रहें। कोई अचानक धन लाभ का अवसर बन सकता है। विवादों से दूर रहें। भूमि भवन क्रय का प्रसंग आ सकता है। स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें।

सिंह- इस राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय में लाभ होने की संभावना है। नई योजना के क्रियान्वयन की खुशी मिल सकती है। धार्मिक कार्यो में भाग ले सकते है। परिवारीजन सहयोग करेगे। कुछ जातकों को पदोन्नति से खुशी मिलेगी। व्यय अधिक हो सकता है। लेन देन में सावधानी बरतें। स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें।

कन्या- इस राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की ओर से अवरोधों के चलते निर्वाह योग्य धन मिलने की संभावना है। शत्रु सिर उठाएगें किन्तु कामयाब नहीं होंगे। परिवार में माहौल सामान्य रहेगा। साझेदारी के कार्यो में सचेत रहना आवश्यक है। लेन देन में सावधानी बरतें। भूमि भवन क्रय का प्रसंग आ सकता है। स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें।

तुला- इस राशि के जातकों के लिए यह माह व्यवसाय-व्यापार की ओर से परिश्रम साध्य सामान्य लाभ कराने वाला है। छोटी-बड़ी यात्राऐं होगी इन यात्राओं को टालें। कोर्ट कचहरी का नौबत न आने दें। परिवार में सामजस्य बिठाने का प्रयास करें। दाम्पत्य जीवन में मधुरता बनाऐं रखें। परिवार में मित्रों से अवहेलना झेलने के अवसर आ सकते है। साझेदारी कार्यो के प्रति सचेत रहें।

वृश्चिक- इस राशि के जातकों के लिए यह माह व्यापार-व्यवसाय की ओर से कुल मिलाकर शुभ फल दायक ही कहा जाएगा। उन्नति के अवसर आएंगें, पर काफी दौड़ धूप के बाद सफलता मिलेगी। व्यस्तता अधिक रहेगी। नए परिचय से खुशी मिलेगी और उनसे सहायता भी मिलेगी। स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें। भूमि भवन क्रय का प्रसंग आ सकता है। स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें।

धनु- इस राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की ओर से कुल मिलाकर अच्छा नही कहा जाएगा। फिर भी पूर्वार्ध की अपेक्षा उत्तरार्ध में प्रगति में बाधाऐं कम आएगी। इस माह आय कम तथा व्यय अधिक होने की संभावना है। परिवार में मित्रों से अवहेलना झेलने के अवसर आ सकते है। स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें। साझेदारी कार्यो के प्रति सचेत रहें।

मकर- इस राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की ओर से अधिक परिश्रम के पश्चात धनागमन कराने वाला है। बुजुर्गो तथा श्रेष्ठ जनों की सलाह काम आएगी। भूमि भवन के क्रय के अवसर आ सकते है। स्थान परिवर्तन अथवा कार्य स्थान परिवर्तन संभावित है। परिवारकी समस्या का समाधान निकल आएगा। नजदीक की यात्राऐं संभावित है।

कुम्भ- इस राशि के जातकों के लिए यह माह व्यवसाय की ओर से सामान्य ही कहा जाएगा। प्रभावशाली एवं श्रेष्ठ व्यक्ति काम आएगे। आय का मार्ग प्रशस्त होगा। अपना मनोबल बनाए रखें। कोई धार्मिक कार्य संभावित है। परिवार में मित्रों से अवहेलना झेलने के अवसर आ सकते है। स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें। परिवार में हल्की नोक-झोक के पश्चात् सामंजस्य बना रहेगा।

मीन- इस राशि के जातकों के लिए यह माह व्यापार-व्यवसाय की ओर से अवरोधों के चलते निर्वाह योग्य धनलाभ कराने वाला है। शत्रु अवैध कार्यों की ओर प्रेरित करेगें जिनसे आपको सचेत रहना है। विदेश से लाभ मिल सकता है। परिवार में सामंजस्य बनाए रखना कठिन प्रतीत होगा किन्तु प्रयास करते रहें। मानसिक चिन्ता रहेगी। स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें।

-इति शुभम्

अहिंसा द्वारा युग-धारा को मोड़ देने वाले इतिहास-पुरुष थे भगवान महावीर

जन्म-जयंती समारोह में पूज्य आचार्यवर का उद्‌बोधन

2 अप्रैल, 2017 ध्यान मंदिर हाल, जैन आश्रम, नई दिल्ली में भगवान महावीर जन्म-जयंती के उपलक्ष्य में आयोजित समारोह को संबोधित करते हुए पूज्य आचार्यश्री रूपचन्द्र जी ने कहा- अपने अहिंसात्मक धारदार प्रयासों से ब्रिटिश-दासता से भारत को मुक्ति दिलाने के कारण महात्मा-गांधी विश्व भर में अहिंसा-पुरुष के रूप में विख्यात हुए। महात्मा गांधी को अहिंसा की प्रेरणा श्रीमद् राजचन्द्र भाई से मिली, जिनका उल्लेख अपने आध्यात्मिक मार्ग-दर्शक (Spiritual Guide) के रूप में अपनी आत्म-कथा में अनेकशः किया है। श्रीमद् राजचन्द्र भाई भगवान महावीर की वाणी के प्रति सर्वात्मना समर्पित थे।

जैन समाज की अहिंसा-निष्ठा आज भी सर्व-विदित है। भगवान महावीर से पूछा गया- कौन सा धर्म नित्य, सनातन शाश्वत है। उन्होंने इस प्रश्न के उत्तर में कहा- अहिंसा धर्म नित्य है, ध्रुव है, शाश्वत है। हमारे सामने बहुत बार प्रश्न आता है महात्मा गांधी की तरह क्या भगवान महावीर ने देश और समाज की समस्याओं के निराकरण के लिए प्रयत्न किये थे?मैं समझता हूं जैन परंपरा ने इस दृष्टि से भगवान महावीर के अहिंसा-अवदान को समाज के समक्ष प्रस्तुत कभी किया ही नहीं। जबकि वास्तविकता यह है भगवान महावीर ने अपने प्रखर अहिंसा-प्रयोगों से तत्कालीन युग-धारा को एक नई दिशा में मोड़ देकर समाज को अनेक विकृत प्रथाओं से मुक्त किया था।

भगवान महावीर की अहिंसा-क्रांति के कुछ बिन्दु इस प्रकार हैं-

• साधना-काल के बारहवें वर्ष में आपने मन-ही-मन संकल्प लिया- जिस दिन किसी दलित-उत्पीडित व्यक्ति के हाथों से आहार मिलेगा, उस दिन मैं अपने तप का पारणा करूंगा। पिछले बारह वर्षों की कठिन तपस्या तथा ध्यान साधना का जन-मानस पर व्यापक प्रभाव था ही। किन्तु महिनों-पर-महिनों का तप पूरा नहीं हो रहा है, इसकी चर्चा राजमहलों से लेकर झोंपडियों तक हो रही थी। पांच महिने और पचीस दिनों के बाद पूरे राज्य ने सुना- चन्दना दासी के हाथों से मिले उड़द-बाकुलों से महावीर का तप पूरा हुआ है।

इस प्रकार पूरे राज्य के लिए वह दासी वन्दनीय/अभिनन्दनीय बन गई। और इस एक घटना ने पूरी दास-प्रथा को आमूलचूल हिला दिया। अपने धर्म-तीर्थ-स्थापना में इसी चन्दन-बाला को 36 हजार साध्वियों का मुखिया बनाया।

• कैवल्य-प्राप्ति के पश्चात् धर्म-तीर्थ की स्थापना के लिए महावीर पावापुरी पहुंचे, जहां महापंडित इन्द्रभूति गौतम के नेतृत्व में एक विराट महायज्ञ होने जा रहा था। उस समय यज्ञों में पशु-बलि-प्रथा भयंकर रूप में थी। भगवान महावीर की आत्म-स्पर्शी वाणी से इन्द्रभूति गौतम का हृदय परिर्वतन हुआ, पशु-बलि नहीं करने का निर्णय तो हुआ ही, इन्हीं इन्द्रभूति आदि प्रमुख ब्राह्मणों के हाथों में भगवान ने अहिंसा की मशाल सौंप दी। देखते-देखते यज्ञों में होने वाली पशु-बलि का अंत हो गया।

• उस समय धर्म का उपदेश केवल संस्कृत में होता था। संस्कृत पढने का अधिकार केवल ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों को था। स्त्रियों और शूद्रों को बिल्कुल नहीं। भगवान ने धर्म का उपदेश प्राकृत भाषा/जन-भाषा में देने का निर्णय लिया, जिससे स्त्रियों और शूद्रों को भी समान अवसर मिल सके।

• जाति-प्रथा को अस्वीकार करते हुए आपने अपने धर्म-संध में चांडाल-पुत्र हरिकेशबल, मेतार्य आदि को दीक्षित ही नहीं किया, उनकी साधना का गुणानुवाद महामुनि के रूप में किया। इस प्रकार जाति के आधार पर स्थापित उच्चता-नीचता की दीवार को तोड़ा।

• स्त्री-जाति को पुरुषों के बराबर समान अधिकार प्रदान किये। शिक्षा, साधना, धर्म-प्रचार और निर्वाण-प्राप्ति तक स्त्रियों की योग्यता को मान्यता दी।

ऐसी अनेक कुरीतियों तथा गलत प्रथाओं से समाज को मुक्त करके आपने अहिंसा-प्रधान समाज की नींव डाली। आचार्य विनोबा भावे ने एक बार कहा था- दास प्रथा मुक्ति, पशु-बलि का अंत, शाकाहार तथा नारी जाति को समान अधिकार के लिए भगवान महावीर का प्रथम इतिहास-पुरुष के रूप में स्मरण किया जाएगा। गौतम बुद्ध ने भी अपने धर्म-संघ की स्थापना में इसी मार्ग का अनुसरण किया।

आपने कहा- वैचारिक विवादों के समाधान के लिए भगवान महावीर ने अनेकांत दृष्टि का सिद्धांत दिया। आपने कहा- सत्य अनंत-धर्मा है। हमारे वाणी-व्यवहार में सत्य का एक अंश ही आता है। उसी को संपूर्ण मानने से विवाद बढता है। हम परस्पर एक-दूसरे के विचारों को समझने की कोशिश करें, एक-दूसरे के विचारों का सम्मान करें, विवाद संवाद में

बदल जाएंगे। दुर्भाग्यपूर्ण बात यह है स्वयं जैन समाज ने इस अनेकांत दृष्टि का उपयोग नहीं किया। उसी का परिणाम है वह दिगम्बर, श्वेताम्बर, स्थानकवासी, तेरापंथी आदि अनेक संप्रदायों में विभाजित हो गया। आपने कहा- स्थानकवासी तेरापंथी समाज का कहना है हम मूर्ति-पूजा नहीं मानते। जबकि देखा जाता है केवल जैन मंदिरों के सिवा वे सभी हिन्दू मंदिरों में जाते हैं, पूजा-पाठ करते हैं, दान-दक्षिणा में सहभागी बनते हैं। यह विचित्र विरोधाभास समझ से बाहर है।

अपने प्रवचन का उपसंहार करते हुए अपने कहा- जन्म-जयंती आदि अवसरों पर हम पूजाओं, रथ-यात्राओं और समारोहों तक सीमित नहीं रह कर आत्मावलोकन तथा आत्मालोचन करें। उनकी यही सच्ची आराधना होगी-

अपने को तरासना ही सच्ची आराधना है
अपने को तलाशना ही सच्ची आराधना है
पूजा-पाठ होते हैं मन यह मंदिर बने
अपनी विपाशना ही सच्ची आराधना है।

इस प्रसंग पर श्री रिखबचन्दजी जैन (टी.टी. उद्योग), श्री सलेकचन्दजी जैन कागजी, श्री ललित कुमारजी नाहटा ने भी अपने विचार रखे। मुम्बई से समागत श्री सोहनराजजी खजांची, जिनका जीवन सर्वोदय तथा शिक्षा-संस्थानों से जुड़ा है, की मौन उपस्थिति अपने में एक प्रेरणा थी। इसके साथ ही प्रो. गंगाप्रसाद विमल, श्री गौरीशंकर रैना, डॉ. अतुल संगीता तलवार, अखिल भारतीय मेयर कौंसिल की जनरल सेक्रेटरी श्रीमती शकुंतला राजलीवाल आदि की उल्लेखनीय उपस्थिति रही।

अपनी अस्वस्थता के बावजूद पूज्या प्रवर्तिनी महासती मंजुलाश्रीजी ने तीन घंटे के इस कार्यक्रम को न केवल पूरा सान्निध्य दिया, अपितु दो शब्दों में जन-समुदाय को आशीर्वाद भी दिया। श्रीमती मंजु जैन, श्रीमती सुषमा गुप्ता ने गीतिकाएं प्रस्तुत की। गुरुकुल के बच्चों द्वारा प्रस्तुत योगासन तथा कव्वाली एवं शब्द-चित्र का जन-समुदाय ने करतल ध्वनि से स्वागत किया। साध्वी समताश्रीजी ने संयोजन के साथ-साथ गुरुकुल के बच्चों की उपलब्धियों पर प्रकाश डाला। योगी अरुण तिवारी ने देश-विदेश के दान-दाताओं के नामों की घोषणा करते हुए आभार व्यक्त किया। संस्था के महासचिव श्री आर.के. जैन ने समागत विशिष्ट महानुभावों का अंग-वस्त्रम् से सम्मान किया।

प्रसाद/भंण्डारा श्रीमती सुषमा गुप्ता की ओर से रहा।

-एन.टी.पी.सी. के अधिकारी, मानव मंदिर मिशन के कार्यकर्ता गण व गुरुकुल के छात्र पूज्य गुरुदेव से आशीर्वाद प्राप्त करते हुए। साथ में हैं साध्वी कनकलता, साध्वी समताश्री व योगी जी।

-मानव मंदिर गुरुकुल के छात्रों ने अपने स्कूल सरस्वती बाल मंदिर द्वारा आयोजित सम्मान समारोह में अनेकों सम्मान प्राप्त किये जैसे शिक्षा, क्रीडा, सांस्कृतिक, योग, कला आदि के क्षेत्र में अपने पदकों और ट्राफी के साथ पूज्य गुरुदेव से आशीर्वाद प्राप्त करते हुए।

-मानव मंदिर गुरुकुल के छात्रों द्वारा योग-प्रदर्शन और सांस्कृतिक कार्यक्रमों की प्रस्तुति देती हुई मानव मंदिर गुरुकुल की बालिकायें।

-जन्म-जयंती समारोह की चित्रमय झलकियाँ।

-जन्म-जयंती समारोह की चित्रमय झलकियाँ।

P. R. No.: DL(S)-17/3082/2015-17
Rgn. No.: DELHIN/2000/2473
Date of Post : 27-28

SEVA-DHAM Plus

Since 1994

.....The Wellness Center

(YOGA, AYURVEDA, NATUROPATHY & PHYSIOTHERAPY)

KH-57, Ring Road, (Behind Indian Oil Petrol Pump), Sarai Kale Khan, New Delhi - 110013
Ph. : +91-11-2632 0000, +91-11-2632 7911 Fax : +91-11-2682 1348 Mob. : +91-9868 99 0088, +91-9999 60 9878
Website : www.sevadham.info E-mail : contact@sevadham.info

प्रकाशक व मुद्रक : **श्री अरुण तिवारी,** मानव मंदिर मिशन ट्रष्ट (रजि.) के.एच.–57 जैन आश्रम, रिंग रोड़, सराय काले खाँ, इंडियन ऑयल पेट्रोल पम्प के पीछे, पो. बो.–3240, नई दिल्ली–110013, आई. जी. प्रिन्टर्स 104 (DSIDC) ओखला फेस–1 से मुद्रित।

संपादिका : श्रीमती निर्मला पुगलिया